भारत राष्ट्र के भावी स्वप्न और अतीत की काली छाया

मैं पशुओँ का डॉक्टर हूँ यह बात मेरे परिचय में ही बता दी गई है कृषि अर्थशास्त्र नामक एक विषय हमें पढना पडता था इसलिये अर्थशास्त्र से मेरा इतना ही सीमित संबंध है। और यह पुस्तक लिखनेवाले तथा आज के समारंभ के अध्यक्ष स्थान को विभूषित करनेवाले पद्मभूषण डो. दुभाषी इत्यादि लोग इस विषय के तज्ञ लोग हैँ । इस लिये इस विषय के संदर्भ में मैं कुछ बोलुं उसमें कोई खास औचित्य नहीं है । परंतु संघ द्वारा सरसंघचालक बनाये जाने के कारण ऐसे विषयोँ पर बोलते समय क्या नहीं बोलना है इसका मुझे ज्ञान हो गया है । इस कारण से वह ज्ञान के क्षेत्र पर मैं अनधिकृत आक्रमण नहीं करुंगा मुझे जो जानकारी है उसके आधार पर मैं आपके सामने कुछ बातेँ रख रहा हूँ ।

जानवरोँ का डॉक्टर होने के कारण हमारे क्षेत्र में एक किस्सा हमेशा चलता है । एक आदमी का कुत्ता बीमार हो गया । वह आदमी अपने पडोसी के घर गया और उससे पूछा, 'मेरा कुत्ता बीमार हो गया है, ऐसे ऐसे लक्षण हैं, क्या आपका कुत्ता भी कभी बीमार हुआ था ? पडोसी ने कहा, हाँ, मेरा कुत्ता भी बीमार हुआ था और मैंने उसे एक बोटल टिंचर आयोडिन पिलाया था। अधिक कुछ न सुनते हुए वह व्यक्ति चला आया और बाजार से खरीदकर एक बोटल टिंचर आयोडिन अपने कुत्ते को भी पिला दिया । अब टिंचर आयोडिन पिलाने पर दूसरा क्या होना संभव था ? कुत्ता 20 मिनिट में छटपटा कर मर गया । वह व्यक्ति तुरंत पडोसी के पास गया और उसे कहा, अरे भाई , तुम्हारे कहने पर मैंने कुत्ते को टिंचर आयोडिन पिलाया पर मेरा कुत्ता तो छटपटा कर 20 मिनिट में मर गया, पडोसी ने कहा, ठीक बात है, मेरा कुत्ता भी ठीक इसी प्रकार छटपटाकर 20 मिनिट में मर गया था।

इस प्रकार कुल मिलाकर अपने समाजजीवन की जो रचना हमने स्वातंत्र्यप्राप्ति के बाद की उसके अनेक लाभ है इसमें कोई विवाद नहीं हैं । परंतु जिन सिद्धांतोँ तथा चौखट के आधार पर हमने विचार किया वह चौखट आज न केवल अपने देश के लिये पर संपूर्ण विश्व के लिये भी पर्याप्त नहीं है, वह मनुष्य को सुख नहीं दे सकती । यह बात अब सभी के ध्यान पर आना शुरु हुआ है । विश्व के सामने कोई पर्याय नहीं है, अर्थात् उसके सामने आधुनिक जगत के प्रगत विचारोँ के नाते अभी तक मात्र दो पर्याय आये हैं। उन दोनों में से कौनसा चुनना यह समस्या उनके सामने खडी है। पर अपने पास एक तीसरा पर्याय भी था। केवल कम्युनिझम और पूंजीवाद दो ही पर्याय हैं ऐसा मानकर हमने जो अपना प्रवास शुरु किया उसके दुष्परिणाम हम आज भुगत रहे हैँ। कारण यह है कि नीतियाँ तथा चौखट तो बाद की चिजें हैं परंतु सब से पहले तो मनुष्य जब स्वयं के विकास के मानक तथा चौखट निश्चित करता है, कार्यक्रम तथा फैंसले करता है, तब उन सबके पीछे उसकी एक निश्चित दृष्टि होती है। अब सब के ध्यान में यह बात आ रही है।

यह बात भी केवल मैं कह रहा हूँ या संघ के लोग कह रहे हैँ या भारतीय विचार के लोग कह रहे हैँ ऐसी बात नहीं है, विश्व के सब लोग अब इन बातोँ की अनुभूति कर रहे हैँ कि मूल में ही कोई कमीं या दोष रह गये हैं । विश्व के जिन जिन देशोँ में इस प्रकार से सोचनेवाले है, उन देशोँ का इन दोनों मार्गोँ पर चलने का और प्रामाणिकता तथा परिश्रमपूर्वक चलकर जनता का हितसाधन करने का शतकोँ का अनुभव है। हमने उसका भी विचार करना चाहिये। और उसका विचार करते समय यह बात ध्यान में आती है कि संपूर्ण विश्व को तीसरे पर्याय की आवश्यकता है और उस तीसरे पर्याय का विचार हम दे सकते हैँ। कारण जीवन की ऑर देखने की हमारी दृष्टि विशिष्ट तथा अलग है।

इस दृष्टि के आधार पर कभी अतीत में, हमने जीस राष्ट्रजीवन का निर्माण किया उसके बाद सहस्रोँ वर्षोँ तक हमने उसके आधार पर एक सुसंपन्न, सर्व दृष्टि से सुखी तथा संपूर्ण विश्व को भी सहायक बननेवाला राष्ट्रजीवन खडा किया । और एक हजार वर्ष के आक्रमणोँ के चलते भी या संघर्षकाल में भी 1860 तक अपने देश के सर्वांगीण सुसंपन्न जीवन को विश्व में अग्रसर रखने में उस जीवनदृष्टि का बहुत बडा योगदान था । यह इतिहास है। इसके लिखित सबूत उपलब्ध हैँ । दस्तावेज उपलब्ध हैँ, एकाधिक लेखकोँ ने उन्हें विश्व के सामने रखा है ।

धर्मपालजी लिखित इतना बडा साहित्य उपलब्ध है । पूरा साहित्य सबूतो के साथ है, परंतु हमने उसकी ऑर ध्यान ही नहीं दिया है, उस साहित्य का अध्ययन करने की हमें फूर्सत नहीं है । ऐसी एक अलग दृष्टि लेकर, यह बात ठीक है कि सरकार नीतियाँ तय करती है, और वह अपने हाथ में नहीं है पर मेरी जो धारणा है उसके आधार पर कुछ निर्माण करुंगा ऐसे निश्चय से भिन्न भिन्न विचारधाराओँ से संबद्ध कुछ प्रामाणिक कार्यकर्ताओँ ने जिसे आज की भाषा में क्लस्टर कहा जाता है ऐसे कुछ दर्शनीय क्लस्टर्स देशभर में खडे किये हैं, पर उसका अध्ययन करने का कष्ट अपने देश के विचारक नहीं लेते हैँ । जो लोग जाकर आते हैं उनके विचारोँ में आमूलाग्र परिवर्तन हो जाता है।

अब यह सब करने का समय आ गया है । एकात्म मानवदर्शन यह कोई मतवाद नहीं है । इसका कारण यह है कि कोई एक निश्चित चौखट या निश्चित नीतियोँ का ही वह समर्थन नहीं करता है । वह दृष्टि देता है । विश्व की सभी सत्ताओँ का अस्तित्व सब ने सर्वप्रथम मान्य करना चाहिये। दुनिया ने यह भी मान्य करना चाहिये की विश्व के प्रत्येक चर, अचर, जड चेतन सब जो पदार्थ हैं वह एक जो पूर्ण है उसके अविभाज्य अंश हैं। जो चेतना किसी एक वस्तु में या जीव में है वही चेतना पूरे संसार में है। और उसी चेतना से यह सब परस्पर संबद्ध है। यह अपनी दृष्टि है । यह दोनों विचारधाराएँ जिस दृष्टि के आधार पर खडी है वह दृष्टि इस संबंध में विश्वास नहीं रखती है । वे ऐसा कहते हैँ की इस विश्व में मनुष्य की सत्ता है, समूह या समाज की सत्ता है, निसर्ग की भी सत्ता है। पर यह सब सत्ताएँ भिन्न

भिन्न हैं और उनका परस्पर से कोई संबंध नहीं है। और विश्व की प्रत्येक वस्तु, चर, अचर, जड, चेतन प्रत्येक प्राणी तथा प्रत्येक मनुष्य दूसरे से अलग है। यहीं से दोषपूर्ण दृष्टि का प्रारंभ होता है। और उस कारण से फीर सुखी करना, सुख यह उसका लक्ष्य है। यह पूरा विश्व सुख के पीछे दौडता है।

यह जो पूरा व्यवहार चलता है, देश, राष्ट्र बनते हैं, हम यहाँ एकत्र आकर ऐसे विषयोँ का विचार करते हैं, यह सब क्योँ करते हैं ? तो सब सुखी हो इस लिये। याने मैं सुख प्राप्त करुं। आत्मनस्तु कामाय । परंतु मैं सुख प्राप्त करुं यह कहते समय मनुष्य के ध्यान में आता है कि बिना अन्य लोगोँ को भी निश्चित सुख मिले हमें अपना सुख प्राप्त नहीं हो सकता। इस कारण से वह दूसरोँ के सुख का भी विचार करता है। पर उस सुख में क्या है उसका अगर चिंतन किया तो वास्तव में सुख माने क्या यहीं से सोचने की शुरूआत होती है। जो अपने को सुख लगता है, जब भूक लगती है तब पेटभर भोजन मिलना यह उस समय सुख है। इसलिये तब मुझे भोजन मिलना चाहिये। मेरी आवश्यकताएँ जिसके कारण पूर्ण हो ऐसी नीतियाँ चाहिये । ठीक है। मोटे तौर पर यह ठीक ही है।

परंतु कभी कभी इससे उलटा भी होता है। घर के सभी सदस्योँ के लिये मिष्टभोजन बनानेवाली और आग्रहपूर्वक खिलानेवाली माता अपने लिये मीठा पदार्थ न बचने पर भी सभी स्वजनोँ की संतुष्टि तथा प्रसन्नता की अनुभूति करते हुए बिना मिठाई खाये प्रसन्न होती है। यह सुख कहाँ से आया ? अथवा रसगुल्ला बहुत पसंद करनेवाला मनुष्य पचास खाएगा, सौ खाएगा, डेढ सौ खाएगा, पर उसके बाद उसकी रुचि उन रसगुल्लोँ में नहीं रहेगी । आग्रह करने पर वह और भी खाएगा पर एक स्थिति ऐसी आयेगी कि रसगुल्ला देखते ही उसे उलटी हो जाएगी । तो फिर वह रसगुल्ले में दिखनेवाला सुख कहाँ गया ? वास्तव में वह उस रसगुल्ले में था ही नहीँ । तो सुख संकल्पना का भी पूर्ण विचार वहाँ नहीं है । सुख की समग्र कल्पना भी नहीं है । सुख अगर रसगुल्ले में है तो किसी को अगर यह कहा कि मैं तुझे रसगुल्ले खिलाता हूँ, पर शर्त यह है कि एक रसगुल्ले के साथ एक जुता खाना पडेगा। और यह कार्यक्रम चार लोगोँ के सामने चलेगा। तो क्या उसे वह रसगुल्ला सुख देगा ? मनुष्य कहेगा, नहीं चाहिये वह रसगुल्ला, मैं आधी रोटी खाकर ससम्मान रहुंगा।

अपने यहाँ बच्चोँ को पढाया भी जाता है कि स्वतंत्रता की सुखी रोटी पारतंत्र्य के पंचपक्वान्नोँ से भी श्रेष्ठ है । क्योँ ? कारण सुख का विचार करते समय वह भी सुख के नाते समग्र ही है। इसलिये मनुष्य क्या है ? विश्व जानता है की वह देह,मन बुद्धि है। मनुष्य समूह और सृष्टि पूरे विश्व को पता है । अर्थ और काम के स्वरूप में मनुष्य में इच्छाएँ होती है, उसकी पूर्ति के लिये मनुष्य को प्रयास करने पडते हैं। कामनापूर्ति करनी पडती है इसलिये अर्थ पुरुषार्थ करना पडता है। परंतु वह कभी न कभी इस सब से उब जाता है और उसे इन सब से मुक्त होना पडता है । यह बात पूरा विश्व जानता है परंतु यह सुख सबको कैसे प्राप्त होगा यह उसे पता नहीं होने से विश्व अब तक आगे तो गया है पर वह कितना गया है ? तो मेक्सिमम गुड ऑफ मेक्सिमम पिपल। (अधिकतम लोगोँ का अधिकतम कल्याण)।

सर्वेपि सुखिन : संतु । यह अभी दुनिया ने देखा नहीं है। परंतु ऐसा हो नहीं सकता क्योंकि सभी पदार्थ निसर्ग के अंश होने के कारण एक कोई छोटे से स्थान पर अगर कोई दु :ख होगा तो कालांतर से वह सब के लिये दु :खदायी होगा । यह बात अब विज्ञान भी मान्य कर रहा है । किसी एक रिमोट स्थान पर होनेवाली चहलपहल के परिणाम कालांतर से सर्वदूर प्रसारित होते हैँ।

सभी को वह अंशत : या पूर्णत :, कभी अधिक तीव्रता से तो कभी सहसा ध्यान में न आनेवाली सौम्यता से पर भुगतने तो पडते ही हैँ । इसलिये यह संपूर्ण विश्व एक लिविंग ऑर्गेनिझ्म है । आजकल विज्ञान में भी यह परिभाषा प्रारंभ हुई है । हमलोग यह बात पहले से जानते हैँ । एक ही चेतना से अनुप्राणित विश्व के यह सभी व्यवहार चलते हैं । और विश्व को (एवरलास्टिंग, अनडिमिनिशिंग, फुल्ली सेटिसफाइंग ब्लिस ।) संपूर्ण, शाश्वत, कभी कम न होने वाले, अमर सुख की कामना है । और यह सुख तभी मिलता है जब हम उस चेतना का साक्षात्कार कर लेते हैँ । उस चेतना के साथ हम तन्मय होते हैँ । इसका कोई दूसरा उपाय नहीं है । कामपूर्ति और उसके कारण अर्थसाधन से समाधान नहीं मिलता है। और समाधान नहीं तब तक सुख नहीं। न जातु कामकामानाम् उपभोगेन शाम्यते, हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय : एवाभीवर्धते ।

अपनी एक विशिष्ट दृष्टि है और उस दृष्टि के आधार पर हम लोगोँ ने एक जमाने में ऐसा विचार किया था कि जिसमें सर्व सत्ता परस्पर मिलीजुली रहे । समाज की सत्ता स्थापित करने के लिये व्यक्ति के अधिकारोँ का हनन आवश्यक नहीं है और व्यक्ति को सुखी करने के लिये समाज को कुचलना आवश्यक नहीं है । और इन दोनों की प्रगति के लिये सृष्टि का विध्वंस करने की आवश्यकता नहीं है । अगर हम ऐसी स्थिति निर्माण करेंगे तो सुख मिलेगा अन्यथा हम विकास करेंगे और उत्तराखंड जैसी आपत्तियाँ आएगी। नये विकास से नयी समस्याएँ खडी होगी और वह इतनी विकराल होगी कि मनुष्य समाज किंकर्तव्यमूढ स्थिति में आ जाएगा । यह सब हम देख ही रहे हैँ । और इस लिये विकास की अपनी कोई दृष्टि हो सकती है क्या ? अपनी दृष्टि के आधार पर जिसे आज पूरा विश्व खोज रहा है ऐसा कोई आदर्श उदाहरण हम विश्व के सामने रख सकते हैं क्या ? कि जीवन का जरा इस प्रकार विचार करते हुए अपनी नीतियाँ गढीये और अपनी चौखट बनाईये।

एकात्म मानव दर्शन जब पहली बार प्रकाश में आया, एकात्म मानवदर्शन यह कोई दीनदयालजी का रिसर्च नहीं है। दीनदयालजी की समालोचना है । अपनी यह जो जीवनदृष्टि है उस जीवनदृष्टि के आधार पर उन्होंने एक कालसुसंगत मंडन किया है । वर्तमान समय में करनेलायक एक विचार सब के सामने उन्होंने रखा है । प्रारंभिक काल में उसे एकात्म मानववाद कहते थे । पर बाद में ध्यान में आया कि इस में वाद जैसा कुछ नहीं है । उसमें किसी के भी साथ विवाद नहीं है । एकात्म मानव दर्शन पढते समय उसमें गांधी भी दिखते हैं, डॉ. आंबेडकर भी दीख जाते हैं, विश्व के अन्यान्य विचारक भी दिखते हैं । कहीं कहीं कार्ल मार्क्स भी दिख जाता है । यह विवाद का प्रश्न नहीं है । यह एक दृष्टि है । इस

दृष्टि से पुनर्विचार कर हमें नीतियाँ बनानी पडेगी, कारण विश्व को अब एक नये तीसरे पर्याय की आवश्यकता है ।

जिसे हम विकास या प्रगति कहते हैं उसका एक भिन्न अर्थ भी हो सकता है । मनुष्य दो पैरों पर चलता है, साइकल चलाने लगता है । तो वह प्रगत हुआ । स्वचालित वाहन हो गया तो अधिक प्रगत हो गया । यह मनुष्य के लिये ठीक है, पर सर्कस में हाथी फूटबॉल खेलते हैं, बंदर साइकल चलाता है । क्या उनके लिये यह प्रगति या विकास है ? निश्चित रूप से नहीं है । फिर अपनी प्रगति माने क्या है ? यह भी अपनी आकांक्षाएँ, अपने समाज की आवश्यकताएँ, प्राथमिकताएँ, उपलब्ध संसाधन तथा जीवनविषयक अपनी दृष्टि, इसी के आधार पर सब का लग अलग तय होगा । हमें भी स्वातंत्र्यप्राप्ति के बाद अपनी इस दृष्टि के आधार पर अपनी समस्याओँ के उत्तर देने वाला, जिसकी नींव डालना संभव है ऐसा, अपनी जीवनदृष्टि, स्वभाव, परंपरा इत्यादि के अनुकूल विकास संभव बनानेवाला कोई मार्ग खोजने की आवश्यकता थी । पर हमने ऐसा नहीं किया । हम भी लंबक(पेण्डुलम)की तरह इधर से उधर भटकते रहे । दुनिया की कोई व्यवस्था ढह गई तो हम वहाँ से वापस लौट गये । इसलिये इसका मूलगामी विचार करने की आवश्यकता है। नहीं तो विश्व में अनेक प्रयोग चल रहे हैँ और ढह भी रहे हैँ ।

अब यह बात स्पष्टरूप में ध्यान में आई है कि अब तो अपनी दृष्टि बदल कर ही कोई नया तीसरा पर्याय खडा करना पडेगा । सौभाग्य से हमारे पास उस तीसरे विकल्प के लिये आवश्यक जीवनदर्शन उपलब्ध है । वह दर्शन माने मात्र किसी ने देखा और हमने सुना ऐसा नहीं है । उसके आधार पर यहाँ वैभव सम्पन्न समाज जीवन चला है । समस्या मात्र यह है कि ऐसा वैभवसंपन्न जीवन चला वह कालखण्ड दो हजार वर्ष पूर्व का था । वर्तमान आधुनिक काल में उन मूल्योँ के आधार पर चौखट कैसे खडी करना, नीतियाँ कैसे तय करना, इन नीतियोँ के अंतर्गत कार्यक्रमोँ का क्रम क्या होगा, इत्यादि विषयोँ का चिंतन करने की आवश्यकता रहेगी । एकत्म मानवदर्शन तो मात्र प्रस्तावना थी ।

उसके उद्गाता पंडित दीनदयालजी तो हत्या के शिकार हो कर चले गये, इस कारण से उस समय इसकी गति भी मंद हो गई । परंतु जैसे जैसे विश्व में इन दोनोँ पद्धतियोँ के अपयश के विविध पहलु ध्यान में आने लगे वैसे वैसे विचार करनेवालों को इसकी आवश्यकता की अधिक अनुभूति होने लगी । जैसे डॉ. दुभाषी ने कहा उस प्रकार यह सब मात्र अभी तक मैं जो बोला हूँ उतना और ऐसा बोलने से नहीं चलेगा । अभी भी उसके उपर ठीक विस्तृत विचार करते हुए, एक चौखट, एक पथ, एक सोपानपरंपरा तैयार करनी पडेगी । और सब उपक्रम सोचने पडेंगे । परंतु उन बारिकीयोँ में तब जाएंगे जब कुछ कर दिखाना अपने हाथ में होगा । वह अभी से कहकर नहीं चलता । इसलिये ऐसा चिंतन होना, और उसकी चौखट तथा सोपान क्या हो सकते हैं उस पर देशभर के संपूर्ण संवाद का मोटे तौर पर एक मत होना चाहिये । क्योँ कि आखिर तो यह एक प्रक्रिया है । यह कोई निर्णय नहीं है । अब यह पुस्तक हो गई, पर यह

निर्णय नहीं है ।

इसके उपर संवाद, परिसंवाद होँगे, चर्चा होगी । खुलकर चर्चा होगी । इसकी कुछ बातोँ का पूर्णत : या अंशत : स्वीकार होगा उसी प्रकार अस्वीकार भी होगा । कुछ भी हो सकता है । और यह सब हो जाने के बाद भी इसको व्यवहार में लाते समय व्यवहार में लानेवाले कार्यकर्ताओँ के अनुभव में से इसका प्रत्यक्ष जो रूप चलेगा वह उस काल के लिये खडा रहेगा । समय बदलता है और बदलते समय के साथ यह सब बातें भी बदलनी पडती है । दृष्टि हमेशा वही रहती है। वह शाश्वत होती है ।

इसलिये नये समय के लिये कालसुसंगत रचनाएँ हर बार नये से करनी पडती है । इस पुस्तक के लेखन का कारण भी यही है । क्यों कि दृष्टि के संदर्भ में मैं जो बोल रहा हूं उसके बारे में पुस्तक लिखने की आवश्यकता नहीं है इतनी बडी संख्या में ग्रंथ उपलब्ध हैं । और यह विषय इतना सनातन है कि उस पर नई पुस्तक केवल नई पद्धति से विषयप्रस्तुति के रूप में हो सकती है । पर उसे आधार बना कर सामयिक आवश्यकतानुसार आज के प्रश्नों का उत्तर देनेवाली रचना क्या हो सकती है, उसकी चौखट कैसी बन सकती है, उसको व्यवहार में लाते समय उसका रास्ता क्या हो सकता है, समाज की मानसिकता बनाने से लेकर, प्रत्यक्ष चौखट के अनुसार कार्यारंभ कैसे संभव होगा, सोपान कैसे होँगे, मार्ग कौनसा होगा, यह सब बातोँ का चिंतन होने की आवश्यकता है ।

यह चिंतन जब प्रारंभ हुआ तब मैं था । इन सब लोगोँ ने इकठ्ठा होकर यह प्रारंभ किया । तब ऐसा ध्यान में आया कि यह कोई 8-10 दिन बैठने से होनेवाला काम नहीं है । इसको कई वर्ष लगेंगे । और यह समझते हुए कार्य शुरू हुआ । पूरा होगा कि नहीं यह मैं नहीं जानता था । तब अगर किसी ने पूछा होता कि आप तो इस कार्यक्रम में गये थे, और भी इतने लोग थे । अब आगे क्या होगा ? तो मैंने कहा होता कि पता नहीं क्या होगा । क्योँ की इस काम को लगकर करना पडता है, समय देना पडता है, दिमाग लगाना पडता है । परंतु इन मित्रोँ ने यह सब परिश्रमपूर्वक किया । एक पांच-दस कदम आगे के लिये उनकी पुस्तक भी आई । पर यहाँ रुकने से काम नहीं चलेगा । कारण यह कोई अंतिम नहीं है ।

जैसे श्री रवींद्र महाजन ने कहा उस प्रकार इस पर सब प्रकार के विचार प्रकट होंगे और वे सब स्वागतयोग्य ही हैँ । ऊन सब विचारोँ पर चर्चा और उसके आधार पर नवीन संस्करण बनते जाएंगे । यह सब मात्र यहीं होगा ऐसा नहीं है । मेरी जानकारी के अनुसार इस दिशा में काम करनेवाले देशभर में 15-20 गट हैँ । उन सब का भी कभी नेटवर्किंग करना पडेगा । मनुष्यजीवन के जितने पहलु रहते हैं उनमें से कुछ पहलु अभी तक ध्यान में आये हैं पर अगर इसके आधार पर नीतियाँ बनाना संभव बनानेवाली चौखट देनी है तो इस के बारे में अधिक विस्तृत विचार करना पडेगा । और उसके आधार

पर देश के सभी संवादों का एक मोटे तौर पर समान अभिप्राय कि ठीक है, हमने अब इस दिशा में जाना चाहिये। ऐसी बौद्धिक हवा हमें तैयार करनी पडेगी। तब कहीं जाकर जिनके हाथ में देश की नीतियाँ तय करने का काम होता है वे इसका संज्ञान लेंगे ।

यह काम बहुत लगकर करनेवाला काम है । पर इसका कोई विकल्प नहीं है । क्योँ कि दुनिया जिनसे परिचित है वह दो मार्ग मानो कुंठित हो गये हैँ । और अब तो परिस्थिति इतनी विचित्र हो गई है कि उन नामों की ही निरर्थकता सामने आ रही है। केवल नाम रहे हैं, नाम के अनुसार बाकी कुछ नहीं रहा। जिसे पहले पूंजीवाद कहते थे वह वैसा पूंजीवाद नहीं रहा और जिसे साम्यवाद कहते थे वह साम्यवाद नहीं रहा। दोनों प्रकार के देश एक दूसरे से कुछ अलग नहीं दीख रहे हैं । और उस कारण से उसपर चलने से मनुष्य का पूर्ण सुख प्राप्त होगा कि नहीं या जितना सुख प्राप्त होगा उससे अधिक समस्याएँ खडी होगी ऐसी शंका आज लोगों के मन में खडी हो गई है । इस प्रश्न का उत्तर देने के लिये अपने देश ने एक नया रास्ता विश्व को देना पडेगा । इस जिद्द से, मनोयोग से अनेक वर्ष परिश्रम के बाद हमें यह चित्र देखने मिलेगा । जब मैं अनेक वर्ष कहता हूँ तब आगे सौ वर्ष नहीं लगेंगे यह निश्चित है कारण अन्य दो मार्गों की विफलता विश्व के ध्यान में आ गई है। पूर्ण विफलता नहीं, सौ प्रतिशत निकम्मी कोई चीज नहीं होती है।

मनुष्य काम करता है वह लाभ होने के कारण ही करता है । इस कारण से सभी में जो अच्छा है उसे लेते हुए, यह दृष्टि परिपूर्ण कर, अपनी दृष्टि के आधार पर क्या किया जा सकता है ? मुझे लगता है कि जब यहाँ दृष्टि का विकास हुआ तब टेकनोलोजी की आज जो स्थिति है वह नहीं थी । आज नवीन प्रकार का विज्ञान और नवीन प्रकार की टेकनोलोजी है । पहले एक देश से दूसरे देश में जाने में अनेक वर्ष लग जाते थे, आज मनुष्य तीन समय का भोजन तीन अन्यान्य देशों में कर सकता है ।

यह सब बातें ध्यान में रखते हुए, विश्व के देशों में घटित घटनाओँ के एकदूसरे पर होनेवाले परिणामों को ध्यान में रखकर, विभिन्न क्षेत्रोँ में बढी हुई और कहीं कहीं आकुंचित हुई मनुष्य के ज्ञान की सीमाओँ का ध्यान रखते हुए इस जीवनदृष्टि के आधार पर एक नयी चौखट, नया पथ, नये सोपान, जीवन का एक नया मार्ग समग्र जगत को देने में हमें सफल होना है । वह मार्ग मात्र बौद्धिक दृष्टि से देकर चलेगा नहीं, उसके प्रयोग होना आवश्यक है । उसके लिये समाज मन जाग्रत होना चाहिये । उसको वह अनुभूति होनी चाहिये ।

मात्र बौद्धिक प्रयास न करते हुए उसके साथ ही समाज को गढने के प्रयास और उसके साथ बौद्धिक प्रयासों से निकला हुआ पाथेय है उसका उपयोग करते हुए प्रत्यक्ष योजना द्वारा लोगोँ के जीवन में इस प्रकार का सुख उत्पन्न करने के प्रत्यक्ष प्रयोग इत्यादि सब बातें जब साथ साथ चलेगी तब सकल विश्व के सामने सुखशांति का एक नया मार्ग रखनेवाला भारत खडा रहेगा । परंतु इन सब उद्यम का प्रारंभ

निश्चितरूप से इस चिंतन में से ही है । और मेरा ऐसा अनुभव है कि समाज के अधिकांश लोग ऐसे ही होते हैं कि उन्हें जो कहा गया वह काम करने को तैयार रहते हैं । पर क्या करना है उसका विचार करने को कहा तो नहीं करेंगे ।

वह चिंतन इत्यादि आप कीजिये, हमें तो केवल क्या काम करना है यह बता दीजिये । चिंतन की क्षमता रखनेवाले लोग कम ही रहते हैं और ऐसे सब लोगों ने अपने चिंतन को कार्यरूप देना चाहिये । उसकी आज आवश्यकता है । और इसलिये मेरा अभिप्राय है कि यह पुस्तक का प्रकाशन होना बडा महत्त्वपूर्ण कार्य है। अन्य दस-पंद्रह केद्रोँ में भी यह चिंतन हो रहा है । परंतु मोटेतौर पर ऐसे कोई निष्कर्ष किसीने निकाले नहीं है । वे भी अवश्य लाएंगे पर उस विषय में प्रथम स्थान निरंतर सात-आठ वर्ष परिश्रम करते हुए श्री रवींद्र महाजन और उनके मित्रोँने प्राप्त कर लिया है यह एक अच्छा प्रारंभ है ।

यह संवाद आगे भी चलना चाहिये । अधिक व्यापक होना चाहिये । जिन लोगों ने यह संवाद चला रखा है ऐसे छोटे मोटे गुटों का नेटवर्किंग होना चाहिये और उसमें से एक ऐसा पाथेय सबको प्राप्त होना चाहिये जिसके आधार पर वे प्रयोग कर सके । और इस विषय के लिये समाज की मानसिकता तैयार कर सके । इस दृष्टि से यह जो उपक्रम शुरू हुआ है और जिसका आज पहला फल प्राप्त हुआ है वह पूर्णत : सफल होने की शुभकामना और आवश्यक सभी प्रकार के सहयोग का मेरी ऑर से आश्वासन देते हुए मैं मेरी बात पूर्ण करता हूँ ।

(पुणे में नेशनल पॉलिसी स्टडीज़ (इन द लीट ऑफएकात्म मानव दर्शन) के अवसर पर संघ प्रमुख माननीय श्री मोहन भागवत द्वारा दिए गए उद्बोधन के कुछ अंश)

.